ISSN: 2456–5474 RNI No.UPBIL/2016/68367 Vol.-6* Issue-1* February- 2021
Innovation The Research Concept

कुतुबन कृत मिरगावती में प्रेम का स्वरूप

Nature of Love in Kutuban's Mirgawati

Paper Submission: 15/02/2021, Date of Acceptance: 26/02/2021, Date of Publication: 27/02/2021

संगीता गर्वा
सहायक आचार्य,
हिंदी विभाग,
ग्रामीण महिला स्नातकोत्तर,
पं• दीनदयाल उपाध्याय,
शेखावाटी विश्वविद्यालय,
सीकर, राजस्थान, भारत

सारांश

भारतीय भाषाओं के साहित्य में कवियों ने मानवीय अनुभूतियों का वर्णन करते हुए प्रेम की भावना को सर्वोच्च स्थान प्रदान किया है। प्रेम भावना केंद्रित काव्य में कवि कुतुबन कृत 'मृगावती' प्रबंध काव्य साहित्य प्रेमियों में समादृत रहा है। प्रस्तुत शोध पत्र में 'मिरगावती' में वर्णित प्रेम भावना के स्वरूप का विवेचन और विश्लेषण किया गया है।

मिरगावती के अनुसार कुतुबन के गुरु शेख बढ़न थे तथा जौनपुर के शासक हुसैनशाह कवि के समकालीन शासक थे। संभवतया कवि कुतुबन को हुसैनशाह की कृपा प्राप्त थी।

'मिरगावती' की कथा का आधार लोक में प्रचलित बहुश्रुत एक प्रेम कहानी है,जिसे आधार बनाकर कवि ने इस प्रबंध काव्य की रचना की है।'मिरगावती' की कथावस्तु का ताना–बाना चंद्रगिरी नगर के राजकुंवर तथा कंचनपुर की राजकुमारी मिरगावती के प्रेम–प्रसंग तथा राजकुंवर के प्रेमपथ की बाधाओं तथा संघर्ष और सफलता को लेकर बुना गया है। राजकुंवर मिरगावती के सौंदर्य पर आसक्त होता है और उसे पाने के लिए जोगी बनकर निकल पड़ता है। मार्ग में उसे अनेक कष्टों का सामना करना पड़ता है। एक अन्य राजकुमारी रूपमणि का राक्षस से उद्धार करने के कारण उसे उससे विवाह करने को बाध्य होना पड़ता है, अनेक कष्टों का सामना करने के बाद वह मिरगावती और रूपमणि के साथ अपने पिता के पास लौटता है और अंत में आखेट में शिकार के साथ स्वयं भी मर जाता है।

मिरगावती में लौकिक तथा पारलौकिक प्रेम का निरूपण हुआ है।'मिरगावती' के प्रेम निरूपण की विशेषताएं हैं– अनन्यता, दृढ़ता एवं निर्भीकता, वेदना एवं कष्ट की प्रधानता, एकाग्रता, प्रेममार्ग में बाधाओं का आधिक्य, अतिशय रुदन,वासना का अभाव, आध्यात्मिकता, प्रतीकात्मकता तथा फारसी प्रभाव।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि कवि कुतुबन ने 'मिरगावती' में प्रेम के उदात्त स्वरूप को प्रतिष्ठित किया है।

Place to the feeling of love while describing human feelings. Poet Qutuban's 'Mrigavati' management in love spirit-focused poetry has been appreciated among poetic literature lovers. The research paper presented has analyzed and analyzed the nature of love sentiment described in 'Mirgavati'.

According to Mirgavati, the Guru of Qutuban was Sheikh Badhan and the ruler of Jaunpur, Husain Shah was the contemporary ruler of the poet. Probably the poet Qutuban had the blessings of Husain Shah.

The story of 'Mirgavati' is the basis of a popular love story prevalent in the folk, which the poet has composed with the help of this epic poem. The context and Rajkunwar's Prempath are woven together with obstacles and struggle and success. Rajkunwar is enamored of Mirgavati's beauty and sets out as a jogi to find her. On the way, he has to face many troubles. Delivering another princess Rupamani from the demon, he is forced to marry her, after facing many hardships, he returns to his father along with Mirgavati and Rupamani and eventually ends up hunting with the hunt. dies.

Mirgavati is characterized by cosmic and otherworldly love. 'Mirgavati' is characterized by love - exclusivity, perseverance and boldness, predominance of pain and suffering, concentration, excess of obstacles in love, excessive blood, lack of lust, spirituality, Symbolism and Persian influence.

In short, the poet Qutuban has distinguished the sublime form of love in 'Mirgavati'.

More about this source textSource text required for additional translation information

मुख्य शब्द : माता–पिता, प्रेम, महत्ता, लौकिक प्रेम, पारलौकिक प्रेम, अनन्यता, दृढ़ता एवं निर्भीकता, वेदना एवं कष्ट, एकाग्रता, आधिक्य, अतिशय रुदन, वासना, आध्यात्मिकता, प्रतीकात्मकता।

Parents, Love, Importance, Cosmic Love, Supernatural Love, Exclusivity, Perseverance And Boldness, Anguish And Distress, Concentration, Excess, Excess Cry, Lust, Spirituality, Symbolism.

प्रस्तावना

हिन्दी–सूफी–प्रेमाख्यान काव्य परम्परा का परिचय

भारतीय साहित्य में प्रेम–कथाओं को लेकर विपुल मात्रा में काव्य सृजन की एक सुदीर्घ परम्परा रही है। इन कथाओं के मूल में लोक में प्रचलित कथाएँ रही हैं। अनेक कथाएँ तो कल्पित नायक नायिकाओं को लेकर लिखी गई। इन प्रेम कथाओं में हीर–रांझा, माधवानल–कामकंदला, सारंगा–सदावृक्ष, ढोला–मारू की कथाएँ सुप्रसिद्ध हैं।

उपर्युक्त प्रेम कथाओं के समान ही सूफी प्रेमाख्यान भी लोकप्रिय हुए और साहित्य तथा समाज में सूफी कवियों ने प्रेमाख्यानों की रचना के माध्यम से ईश्वरीय प्रेम का निरूपण किया। यद्यपि हिन्दी के सूफी कवियों ने लोक प्रचलित प्रेम कथाओं को ही अपने काव्य का आधार बनाया है तथापि वे इन प्रेम कथाओं के माध्यम से ईश्वर को पाने के संदेश देते हैं। इनमें मुल्लादाऊद, कुतुबन, मंझन, मलिक मुहम्मद जायसी, उसमान आदि प्रमुख कवि हैं।

शोध–पत्र का उद्देश्य

कवि कुतुबन कृत मिरगावती मध्यकालीन हिंदी साहित्य की एक महत्त्वपूर्ण रचना है। इतिहास के आइने में हम जब पीछे मुड़कर देखते हैं तो पाते हैं कि उस युग के समाज का स्वरूप कैसा था? युगीन साहित्य में लोगों के जीवन, रीति–रिवाज, परंपरा, सांस्कृतिक परिवेश,रहन सहन, कला ,वैचारिकता आदि का परिचय मिलता है। प्रस्तुत शोध कार्य में कुतुबुन कालीन समाज में स्त्री–पुरुष के बीच विविध संबंधों की पड़ताल की जा रही है। ईश्वर की इस सृष्टि में प्रेम की भावना को सर्वोच्च स्थान दिया गया है। यदि प्रेम नहीं होता तो कदाचित यह सृष्टि भी नहीं हुई होती। प्रेम की भावना से समाज में संबंध बनाए जाते हैं। परिवार और समाज के निर्माण में प्रेम की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है।समय के साथ मानवीय संबंधों में भी परिवर्तन होता जाता है। आदिकाल से लेकर वर्तमान समय तक समाज में अनेक परिवर्तन हुए हैं।इन परिवर्तनों की जानकारी हमें इतिहास और तत्कालीन साहित्य के माध्यम से ही प्राप्त होती है।कवि कुतुबन के समय के समाज में लोगों के प्रेम संबंध किस प्रकार के थे, प्रेम का स्वरूप कैसा था इसका अनुसंधान करना ही इस शोध–पत्र का उद्देश्य है।

मिरगावती की कथावस्तु

मिरगावती प्रबंध काव्य की कथा संक्षेप में इस प्रकार है–

चंद्रगिरि नामक नगर में एक गणपति देव नाम का राजा राज करता था। वह सब प्रकार से सम्पन्न था किंतु एक पुत्र नहीं होने के कारण दुःखी था और ईश्वर से पुत्र प्रदान करने के लिए प्रार्थना करता रहता था। ईश्वर ने उसे एक सुंदर पुत्र प्रदान किया। जिसका नाम राजकुंवर रखा। वह सब प्रकार की विद्याओं में पारंगत हो गया। एक दिन जब वह आखेट के लिए गया तो एक सतरंगी मृगी को देखा और उसके सौंदर्य पर मुग्ध हो गया। एक दिन वह उसे पाने में सफल हो गया। मिरगावती उड़ने की कला जानती थी इसलिए वह एक दिन राजकुँवर की धाय को अपना पता देकर उड़ जाती है। राजकुँवर मिरगावती को पाने के लिए जोगी बनकर उसकी खोज में निकल जाता है। मार्ग में उसे रूपमणि नामक एक राजकुमारी मिलती है जो एक राक्षस के द्वारा अपहरण किये जाने के बारे में बताती है। राजकुंवर उस राक्षस को मारकर उसका उद्धार करता है किंतु उसे रूपमणि से विवाह करने को बाध्य होना पड़ता है। वह चतुराई से रूपमणि को छोड़कर कंचनपुर की यात्रा पर निकल पड़ता है। अनेक कष्ट सहता हुआ वह कंचनपुर पहुँच जाता है। कुछ दिनों बाद राजकुंवर के पास एक ब्राह्मण उसके पिता का संदेश लेकर पहुंचता है। ब्राह्मण रूपमणि का भी संदेश देता है तदनन्तर राजकुंवर मिरगावती की सलाह से कंचनपुर का राज्य अपने पुत्र रायभान को सौंपकर मिरगावती के साथ रूपमणि के पास पहुंचता है। फिर रूपमणि, मिरगावती सहित अपने पिता के नगर में पहुंचता है।

प्रेम का अर्थ

बृहत् हिन्दी शब्द कोश के अनुसार –"गुण, रूप, स्वभावादि के कारण उत्पन्न होने वाला वह आकर्षण एवं सुखद मनोभाव जिससे प्रभावित होकर एक व्यक्ति दूसरे को सदा अपने साथ या निकट और प्रसन्न रखना चाहता है। प्यार, मुहब्बत, अनुराग; कृपा; क्रीड़ा, केलि, आनन्द; मजाक आदि।[1]

मिरगावती में प्रेम का स्वरूप

'मिरगावती' के अध्ययन से ज्ञात होता है कि कवि ने इसमें लौकिक और पारलौकिक दोनों ही प्रकार के प्रेम को निरूपण किया है। यद्यपि मुख्य स्वर लौकिक प्रेम को रहा है परन्तु यह लौकिक प्रेम ही पारलौकिक प्रेम का माध्यम भी बनता है। लौकिक प्रेम को कवि ने उतनी ही गरिमा के साथ व्यक्त किया है जितना कि पारलोकिक अथवा आध्यात्मिक प्रेम को। 'मिरगावती' के प्रेम निरूपण को निम्नांकित रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है।

मिरगावती में लौकिक प्रेम

'मिरगावती' में कवि कुतुबन ने लौकिक प्रेम के वर्णन में भाव प्रवणता का परिचय दिया है। आलोच्य काव्य में लौकिक प्रेम का निरूपण मार्मिकता सजीवता एवं सरसता के साथ किया है। कवि ने सर्वप्रथम लौकिक प्रेम के अंतर्गत वात्सल्य अथवा पुत्र प्रेम को स्थान दिया है। चंद्रगिरि के राजा गणपति देव ने ईश्वर से पुत्र की कामना की। उसकी प्रार्थना स्वीकार हुई। पुत्र के उत्पन्न होने पर उसने अपार धन राशि अपने पुत्र पर न्योछावर कर दी। पिता ने उसकी शिक्षा–दीक्षा तथा सुख की सम्पूर्ण व्यवस्था

की।[2] जब राजकुँवर को मिरगावती छोड़कर चली गई और राजकुँवर जोगी हो गया और घर से निकल गया तब पिता को इसकी जानकारी हुई तो वह बिलख–बिलख कर रोने लगा। उसकी स्थिति वैसी ही हो गई जैसी 'सुत वियोग में राजा दशरथ की' अथवा अभिमन्यु के बिना अर्जुन की अथवा बिना श्रवण कुमार के अंधे माता–पिता की।[3]

मिरगावती में कवि ने लौकिक प्रेम के अंतर्गत दाम्पत्य प्रेम का भी मनोहारी वर्णन किया है। दाम्पत्य प्रेम के वर्णन आलोच्य कृति में अनेक स्थलों पर उपलब्ध होते हैं। जब राजकुँवर और मिरगावती का विवाह सम्पन्न हो जाता है तो वे दोनों सारस पक्षियों की जोड़ी के समान मिलकर आनंद पूर्वक रहने लगे। वे दोनों एक साथ हँसते–खेलते रहते थे। कवि ने उनके दाम्पत्य प्रेम का प्रभावशाली वर्णन किया है।[4]

इसी प्रकार राजकुँवर के कंचनपुर पहुँचकर मिरगावती से मिलन और दोनों की क्रीड़ाओं का वर्णन भी दाम्पत्य प्रेम का उत्कृष्ट उदाहरण है।[5] रूपमणि का राजकुँवर के प्रति प्रेम भी दाम्पत्य प्रेम के अंतर्गत आता है।

मिरगावती और उसकी सखियों का प्रेम भी लौकिक प्रेम की श्रेणी में आता है।

पारलौकिक प्रेम

सूफी प्रेमाख्यान काव्य परम्परा की रचनाओं के अवलोकन से ज्ञात होता है कि इन रचनाओं में यथार्थतः पारलौकिक प्रेम का ही निरूपण हुआ है। वस्तुतः इन काव्यों में नायिका एक सामान्य स्त्री न होकर अलौकिक सौन्दर्य से युक्त तथा नायक भी सामान्य पुरुष न होकर अध्यात्म और साधना के मार्ग का साधक है। इस प्रकार नायक और नायिका के बीच जो सम्बन्ध है वह जीवात्मा और परमात्मा का सम्बन्ध है। यह कथन मिरगावती काव्य के संदर्भ में सत्य प्रमाणित होता है। आलोच्य काव्य में भी राजकुँवर और मिरगावती के माध्यम से जीवात्मा और परमात्मा के दिव्य और आध्यात्मिक प्रेम की मार्मिक व्यंजना हुई है। प्रस्तुत कृति में राजकुँवर और मिरगावती का प्रेम साधना नहीं स्वयं साध्य बनकर प्रस्तुत हुआ है। यह प्रेम आराधना नहीं स्वयं आराध्य है, कल्पना नहीं स्वयं संकल्प है, भावना नही स्वयं भाव्य है, धारणा नहीं स्वयं धार्य है, चिन्तना नहीं स्वयं चिन्त्य है कामना नहीं स्वयं काम्य है, संवेदना नहीं स्वयं प्रमेय है। यही कारण है कि कवि कुतुबन ने इस आध्यात्मिक प्रेम की विशदता, उज्ज्वलता, दिव्यता, अलौकिकता, नैसर्गिकता, शुचिता आदि का अत्यंत मर्मस्पर्शी वर्णन किया है।

'मिरगावती' के नायक का प्रेम का साधक है। वह अपने प्रिय के लिए जीव के माँगे जाने पर उसे निकालकर देने को तत्पर है। वह कहता है कि– "जहाँ पर भी मिरगावती का नाम सुन लूँ तो सातों स्वर्ग को दौड़कर चढ़ जाऊँ। जिस प्रकार राम ने सीता के लिए निशाचरों का विध्वंस किया उसी प्रकार मैं भी मिरगावती के लिए स्वर्ग को भी जला डालूँ।"[6] मिरगावती में वर्णित प्रेम में कहता है के उसकी प्रेमिका (मिरगावती) उसका जीवन हरण कर ले गई है और उसके बिना शरीर प्राण रहित हो गया है। अब उसे न तो विस्मय है, न लज्जा है, न हर्ष है, प्रेम ने चित्त में आकर चिन्ता (मिलन की) से दग्ध करना शुरु कर दिया है। उसे कुछ भी सुधि नहीं रहती । उसका चित, चिंता, लज्जा, भय, विस्मय, हर्ष और बुद्धि सभी से रहित हो जाता है। उदाहरणार्थ–

जीउ मिरगावती हरि लै गयी..... बिसमौ हरख न बुधि।।[7]

मिरगावती में वर्णित यह प्रेम सचमुच पारलौकिक प्रेम है क्योंकि इसे वह प्राप्त कर सकता है जो अपने प्राणों का उत्सर्ग कर सकता है। प्रेम इतने उच्च धरातल पर प्रतिष्ठित है कि जो बिना दुःख सहे इसे प्राप्त करना चाहता है वह वातुल (बावला) है। जो प्रेम का खेल खेलना चाहता है उसे शीश दान करके खेल खेलना पड़ता है। कवि कुतुबन कहता है कि प्रेम का कँगूरा अत्यन्त उत्तुंग है कि उसे छूने के लिए पैरों तले शीश देकर उसे कुचलना होता है। फिर भी उस तक हाथ नहीं पहुँचता।

पेम खेल जो चाहै खेला। सर सेंउ खेल जिउ पर हेला।।

कुतुबन कंगूरा पेम का, ऊँचा अति र उतंग।
सीस न दीजै पाउ तर, कर न पहुँचै खंग।।[8]

इस प्रेम के लिए हृदय में ऐसी आग जलती है कि उसे प्रज्वलित रखने के लिए अहं के घृत और तेल की आहुति देनी होती है। यह सब प्रकार के खेलों से अधिक गहन है।

ऐसहिं आगि जरत हैं उर मँह, मैं मेलेउ धिउ तेल।

पेम गहँन सब खेल सेंउ, जो र सँभालै खेल।।[9]

उसे प्रियतम तक पहुँचने के लिए सात पतोलियों (मंजिलों) को पार करना पड़ता है और तब स्वर्ण–सिंहासन पर आसीन प्रियतम के दर्शन होते हैं।

सातों पवँरि नाँघि जो आवा। बेकर बेकर सातउ भावा।।
आगों आइ जो देखी ताही। चाँद बैठि तारे सब आही।।
सोन सिंघासन ऊपर आछत, तिहा बैठिओं देखि।
झार लाग जइस कहँ, एको भरिसि न पेखि।।[10]

जो प्रेमी प्रियतम के विरह में जल–जलकर मरता है और मर–मर कर जीता है वह ही प्रेम सुरा का पान करता है। इस अलौकिक रस का पान करने वाला कोई बिरला ही होता है। ऐसा प्रेमी समुद्र को पार कर लेता है, पहाड़ पर चढ़ जाता है, अग्नि में कूद जाता है। प्रेम की सुरा का आचमन कर लेने वाला क्या–क्या नहीं करता है जैसा कि स्पष्ट है–

जरि जरि मरे सो मरि जीयै..... किय किय न करन्त।।[11]

इसी प्रकार कवि कुतुबन ने 'मिरगावती' में जिस प्रेम का निरुपण किया है वह निश्चय ही पारलौकिक प्रेम ही है।

प्रेम निरुपण की विशेषताएँ

कुतुबन कृत 'मिरगावती' में वर्णित प्रेम की दशा और दिशा का अध्ययन करने पर जो प्रमुख विशेषताएँ सामने आती है उनमें आलोच्य कृति का प्रेम निरुपण अनूठा बन पड़ा है। वस्तुतः 'मिरगावती' का प्रेम निरुपण उदात्त और ईश्वरीय स्वरूप को प्राप्त हो गया। 'मिरगावती' के प्रेम निरूपण में इन विशेषताओं को निम्नांकित रूप में प्रस्तुत किया जाता है–

अनन्यता

'मिरगावती' के प्रेम निरूपण की सर्व प्रमुख विशेषता है– अनन्यता। प्रस्तुत कृति में वर्णित सभी प्रमुख पात्रों का प्रेम अनन्य तथा एकनिष्ठ प्रेम है। वह प्रेम चाहे

राजकुँवर का मिरगावती के प्रति हो अथवा मिरगावती का राजकुँवर के प्रति प्रेम या फिर रूपमणि का नायक राजकुँवर के प्रति प्रेम। सभी पात्रों के हृदय में अपने प्रियतम के प्रति एक निष्ठ प्रेम है। आलोच्य काव्य के प्रमुख पात्र अपने प्राणापण से अपने प्रियतम के अतिरिक्त किसी अन्य की ओर तनिक भी आकर्षित नहीं होते।

यदि सर्वप्रथम राजकुँवर के प्रेम पर विचार करते हैं तो पाते हैं कि मिरगावती के प्रथम दर्शन के उपरान्त ही वह एक मात्र उसी का होकर रह जाता है। उसे उसके साथी, उसका पिता, धाय सभी समझाते हैं। परन्तु उसका मन तनिक भी विचलित नहीं होता। वह सब छोड़कर चल देता है।

यद्यपि राजकुँवर को विषम परिस्थिति में रूपमणि से अनिच्छापूर्वक विवाह करना पड़ा परन्तु वह उसको हृदय से नहीं चाहता था । उसका पूरा ध्यान मिरगावती में ही था। वह रूपमणि से आडम्बर पूर्ण व्यवहार करके मिरगावती के कंचनपुर के लिए प्रस्थान कर देता है। राजकुँवर मिरगावती को प्राप्त करने के लिए जान की बाजी लगाते हुए अनेक कष्टों को झेलता हुआ उसके पास पहुँचता है।

इसी प्रकार मिरगावती का एक निष्ठ प्रेम राजकुँवर के प्रति ही है। वह उसे अकेला छोड़कर अवश्य अपने पिता के घर चली आती है परन्तु राजकुँवर के बिना उसका मन नहीं लगता है। वह अपनी सखियों को बताती है–

जो कछु अहा मरम सो कहा।
लुबुधा जिउ अब जाइ न रहा।।[12]

इसी प्रकार कवि ने रूपमणि के राजकुँवर के प्रति प्रेम को भी अनन्य और एकनिष्ठ बताया है। रूपमणि कहती है कि–"अगर मैं अपने पति राजकुँवर के अतिरिक्त किसी अन्य पुरुष को देखूँ तो मेरे नेत्र तड़क कर फूट जायें। जैसा कि निम्नांकित पंक्तियों से स्पष्ट है–

पिय बिन अउर न देखौं काहू। देखें बोलैं जासेंउ लाहू।।
फूटहिं नैन तरक कै, जो देखौ ओराहँ।
रसना थकेउ है सखी, बिनु पिउ बोलाहँ।।[13]

इस प्रकार 'मिरगावति' के तीनों प्रमुख चरित्रों का प्रेम अनन्य व एकनिष्ठ है।

दृढ़ता एवं निर्भीकता

'मिरगावती' के प्रेम निरूपण में दृढ़ता एवं निर्भीकता की प्रवृत्ति के दर्शन होते हैं। कुतुबन ने प्रेम–मार्ग के प्रेमी को अपने लक्ष्य के प्रति दृढ़ और स्थिर बनाकर प्रस्तुत किया है। कवि की मान्यता है कि प्रेम के मार्ग में जो प्रेमी दृढ़ निश्चयी तथा निर्भीक नहीं हो सकता वह अपने प्रियतम को पा भी नहीं सकता। यही कारण है कि कुतुबन ने राजकुँवर को अदम्य साहसी के रूप में चित्रित किया है। राजकुँवर को जंगम कंचनपुर के मार्ग की कठिनता का उल्लेख करते हुए कहता है– हमने कंचनपुर के मार्ग को देखा है उसके जैसा कठिन मार्ग कहीं नहीं है। उस मार्ग में अगम्य पर्वत, समुद्र, वन, भूत–प्रेत और मनुष्य के वेश में राक्षस और दैत्य हैं। कदम–कदम पर भूत–प्रेत के साथ भुजंग हैं यह मार्ग अत्यन्त दुःख भरा मार्ग है, दुर्गम मार्ग है इसे पार करने पर कंचनपुर पहुँचा जा सकता है।[14]

इस पर जंगम को राजकुँवर उत्तर देते हुए कहता है– मैं दैत्य, भुजंग आदि से भयभीत नहीं होता क्योंकि काया में प्राण हों तो भ्रमित होऊँ। यदि राक्षस और भूत मुझे खा भी जायेंगे तो मेरा साधना मार्ग सफल हो जायेगा। हे जंगम वह दुःख मार्ग तुम मुझे अवश्य दिखाओ।

दूत भुअंगम हौं न डरावों.....काहू ताकर कौन मरोह।।[15]

वह जैसे ही बोहित (नाव) में बैठकर समुद्र में यात्रा करने लगा लहरों के थपेड़ों ने उसके बोहित को झकझोर कर रख दिया। एक माह तक वह समुद्र के भँवर में फंसा रहा। पर विचलित नहीं हुआ। मनुष्य–भक्षी साँपों का सामना करते हुए एक बार तो वह चिंतित हुआ परन्तु उसने अपना धैर्य नहीं खोया। आगे चलने पर उसे जब रूपमणि राक्षस की कारा में दिखाई दी, उसने वहाँ से भागने के स्थान पर राक्षस से युद्ध कर और रूपमणि को मुक्त कराने का दृढ़ निश्चय किया। यद्यपि रूपमणि ने राजकुँवर को अपनी जान बचाकर भाग जाने का आग्रह किया पर वह नहीं माना। रूपमणि ने उसकी निर्भीकता को देखकर अनुमान किया कि वह क्षत्रिय युवक है।[16]

इसी प्रकार राजकुँवर घने, अँधेरे से युक्त वन में भी तीस दिन तक साहस पूर्वक यात्रा करता रहा। यही नहीं वह नरभक्षी गड़रिया को भी चतुराई से मारकर कंचनपुर तक सुरक्षित पहुँच गया। यह सब उसकी दृढ़ता निर्भीकता की प्रवृत्ति को प्रस्तुत करता है। अन्यत्र वह कहता है–

मरै क डर महँ कछू न लागे।
नेह पंथ मुँए पाप सब भागै।।[17]

वेदना एवं कष्ट की प्रधानता

वेदना की प्रधानता, 'मिरगावती' में निरुपित प्रेम की उल्लेखनीय विशेषता है। 'मिरगावती' में वर्णित प्रेम मार्ग में आरम्भ से अंत तक वेदना का ही प्राधान्य रहा है। राजकुँवर के जन्म के समय ही पंडितों और ज्योतिषियों ने यह भविष्य वाणी कर दी थी कि यद्यपि इस बालक की कुँडली में उत्तम ग्रहों का योग है परन्तु कुछ ग्रह कष्ट कारक होंगे। इस बालक को स्त्री–वियोग का दुख झेलना पड़ेगा।

बाँभन बैठि गुनै सब लागे।
रासि गुनहि (उन्ह) करम सुभागे।।

बहुत गरह उन्ह उत्तिम गुने।
कछु रे गरह आहहिं सामने।।
तिहि गुनि गुनि पंडितँहि कहि सोई।
तिय वियोग कर कछु दुख होई।।[18]

वह जैसे ही युवा हो गया उसके जीवन में वेदना का भी आविर्भाव हो गया। सतरंगी मृगी को देख लेने के

पर उसका हृदय विरह–वेदना से भर गया। वह कहने लगा–

जब लगि हौं न कुरंगिनि पावँउँ।
मरौं न जीवन इहँ जिउ लावउँ।।
सुधि बिसरी बुधि गई हेरानी।
चित महँ गड़ी सो पिरम कहानी।।[19]

और इस प्रकार वेदना का एक अंतहीन सिलसिला प्रारंभ हो गया। एक बार तो उसने अपनी प्रियतमा मिरगावती को पा भी लिया परन्तु वह फिर उसे अकेला छोड़कर चली गई। राजकुँवर ने अपनी प्रेमिका को पाने के लिए क्या–क्या न सहा? क्या क्या न किया? उसका जीवन ही वेदना के साये में बीतने लगा। रास्ते के झंझट उसकी वेदना को और बढ़ाने लगे। वेदना अनेक रूपों में उसे सताने लगी। प्रेम मार्ग में एक के बाद एक कष्ट वह झेलता गया। इस प्रकार कवि ने आलोच्य काव्य की सम्पूर्ण कथा में वेदना एवं कष्टों का शृंखलाबद्ध वर्णन किया है।

एकाग्रता

प्रेम का मार्ग तो साधना का मार्ग है। इस मार्ग में बहुत सावधानी से चलना पड़ता है। कबीर ने तो कहा है कि प्रेम की गली अत्यंत संकरी है और उसका मार्ग फिसलन भरा है। जरा चूके कि गिरे। कुतुबन ने इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए प्रेम–मार्ग में एकाग्रता के महत्व को विशेष स्थान दिया है क्योंकि इस प्रेम के मार्ग में उसी को सफलता मिलती है जो एकाग्र चित्त होकर प्रेम पथ पर आगे बढ़ता है, जिसका हृदय प्रेम के रंग में रंग जाता है कि उसे न भूख लगती है, न नींद आती है और न वह कभी विश्राम करता है । वह सबके सोने पर भी अकेला जागता रहता है और अंधेरी रात में वन में बैठा–बैठा बैरागी की तरह किंगरी लेकर एक ही प्रेम की धुन बजाता रहता है। उसके नेत्र एक ही मार्ग में लगे रहते हैं उसे एक मात्र अपना प्रियतम ही सर्वत्र दिखाई देता है और वह अपने प्रियतम के लिए एकाग्र चित्त होकर ध्यान करता रहता है। कवि कुतुबन ने 'मिरगावती' के नायक राजकुँवर की ऐसी दशा का वर्णन किया है। कवि ने उसकी प्रेम में तन्मयता और एकाग्रता का निम्नांकित मार्मिक चित्र प्रस्तुत किया है–

चला कुँवर मिरगावती जहाँ..... जब लग मोह मया मन कीजइ।।[20]

प्रेम मार्ग में बाधाओं का आधिक्य

कवि कुतुबन ने प्रेम मार्ग में अनेक बाधाओं का वर्णन किया है। वह प्रेम ही क्या जिसके मार्ग में कोई बाधा न हो। प्रेम तो बलिदान चाहता है वह आसानी से उपलब्ध नहीं होता है। प्रस्तुत प्रबंध काव्य की नायिका भी इसी सत्य का उद्घाटन करते हुए कहती है जो बिना मूल्य के अपने प्रियतम को पा लेता है वह उसकी कीमत (मोल) नहीं जानता। ऐसा प्रेमी प्रेम के महत्व को भी नहीं समझता । इसलिए मैं कुँवर को छोड़कर जा रही हूँ। तुम कुँवर से कहना कि वह सचमुच मुझे प्रेम करता है तो मुझसे आकर मिले।

धाई न दोखँ आहै तोरा।
कहहु जोहार कुँवर सेंउ मोरा।।
औ अस कहहु कुँवर सों बाता।
मोर जीउ आहे तिह राता।।
सेंती जो पावइ सो न कहैं मोला।
ताकर मोल न जानै भोला।।
इह कारन हौं जाउँ उड़ाई।
कहहु कुँवर सों आवइ धाई।।[21]

फिर तो कुँवर के प्रेम मार्ग में अनेक बाधाएँ आ गई। सर्वप्रथम तो उसके पिता ने उसे अपने वात्सल्य भाव का वास्ता दिया। फिर अपरिचित मार्ग, मार्ग का पता चल गया तो रास्ते में गरजता हुआ समुद्र, समुद्र के नरभक्षी भुजंग। वहाँ से आगे बढ़ने पर राक्षस से युद्ध। उसके बाद रूपमणि से विवश होकर विवाह करना। घना और अंधकार पूर्ण अरण्य। हिंस्र गड़रिया के द्वारा धोखा देकर गुफा में बंद कर लेना, एक बहुत लम्बी बाधाओं की सूची। परन्तु अपने प्रेम की शक्ति को माध्यम बनाकर इन अनेक बाधाओं का सामना करते हुए नायक अपनी प्रियतमा तक पहुँच गया। वह मिरगावती से मिलन के उपरांत प्रेम की बाधाओं का विस्तृत वर्णन प्रस्तुत करता है।[22] प्रेम के मार्ग की अनेक बाधाओं में कतिपय का एक वृत्त प्रस्तुत है–

कुँवर कहा अब हम दुख सुनहू।
हौं रे कहौ तुम्ह चित मँह गुनहू।।
तू र छाँड़ि जिह दिन मुँहि आई।
तिह दिन सेंउ मै भुगुति न खाई।।
जोग पन्थ होइ भेस भरायेउ।
आरन वनखँड माँझ धसायेउँ।।
फुन र समुँद मँह परेउ जो आई।
लहरि उठै कछु कही न जाई।
माँस देवस वहँ डर मँह रहा।
फुनि लहरहिं सेउ जो तिर वहा।
आइ परेंउ तिह ठाँइ औघट,
जहाँ न आहै घाट।
सिखर ऊँच न मारग पेखैं,
चाँटहि चढ़ै न पाँत।।[23]

अतिशय रूदन

विवेच्य काव्य में कवि कुतुबन ने प्रेम निरूपण के अंतर्गत रूदन की अतिशयता को एक मुख्य प्रवृत्ति माना है। कवि का विचार है कि प्रेम का मार्ग वेदना, कष्ट तथा पीड़ा से तो युक्त है ही किन्तु इस प्रेम–मार्ग में प्रेम के राही को विरह जन्य पीड़ा के कारण आँखों से आँसू बहुत बहाने पड़ते हैं। यहाँ प्रेम–मार्ग में रूदन को बुरा नहीं माना जाता बल्कि यहाँ रूदन का विशेष महत्व है। इस मार्ग में रूदन एक वरदान है। यही कारण है कि प्रेम मार्ग का पथिक रोता ही रहता है। वह अपने प्रियतम का स्मरण कर–करके क्रन्दन करता रहता है और रो–रोकर दौड़ पड़ता है।[24] वह रोते हुए संभलता है और विधाता से कहता है तूने मेरे जाते हुए साथी को क्यों नहीं रोका।[25] आलोच्य कृति में कुँवर को धाय जब मिरगावती का संदेश देती है तो वह संदेश को सुनकर पृथ्वी पर सिर पटक कर मार लेता है।[26] प्रेममार्ग का पथिक ही रूदन नहीं करता बल्कि उसके विरह के बखान को सुनकर देखने वाला भी रोने लगता है।[27] और आँसुओं से मल–मल कर अपना मुँह धोता रहता है; यथा–

कहत विरह जैं सुना सो रोवा।
नैन सलिल (मुख) मलि मलि धोवा।।[28]

वासना का अभाव

प्रेम पथिक सच्चा प्रेमी होता है। उसका प्रेम निस्वार्थ होता है। आत्मा का आत्मा से सम्बन्ध ही प्रधान होता है अतः जो वह प्रेम करता है वह वासना रहित होता है। उसको केवल शारीरिक आकर्षण नहीं होता। उसकी वासनाएँ शांत हो जाती हैं। संसार और जीवन के प्रति उसका दृष्टिकोण ही बदल जाता है। प्रेम–पथिक को संसार का माया–मोह आकृष्ट नहीं करता। वह माया को मिथ्या मानकर उसका त्याग कर देता है वह इसकी ओर फिर मुड़कर नहीं देखता। वह अपने लक्ष्य की ओर बढ़ जाता है। प्रेम–पथिक तो मार्ग और अमार्ग भी नहीं जानता। विरह की भाषा के अतिरिक्त वह और कुछ नहीं बोलता क्योंकि व्यक्ति मार्ग और अमार्ग की बात तभी करता है जब तक कि मन में मोह और माया का भाव रहता है। और मोह–माया के शांत होने पर जप, तप, संयम और त्याग को माध्यम बनाकर वह आत्मस्थ हो जाता है। वासना के शमन का चित्रण कुतुबन ने मिरगावती राजकुँवर के मिलन के बाद की स्थिति में भी चित्रित किया हैं। मिरगावती की प्राप्ति और मिलन के बाद साधक राजकुँवर की सम्पूर्ण तृष्णाएँ और कामनाएँ शान्त हो गई तथा उसका मन स्थिर हो गया और वासनाएँ शांत हो गई। निम्नांकित पंक्तियाँ दृष्टव्य हैं–

भँवर बास परिमल सब लिया।
औ सब अमिय महारस पिया।।
तिस्नाँ काम सान्त मन भई।
दुख बेदन उर कै सब गई।।[29]

आध्यात्मिकता

'मिरगावती' के प्रेम निरूपण में आध्यात्मिकता का समावेश दिखाई देता है क्योंकि इसमें वर्णित प्रेम सामान्य और लौकिक नहीं है। यह प्रेम तो अलौकिक है। कुतुबन ने 'मिरगावती' के प्रेम में जिस प्रियतम का वर्णन किया है वह प्रियतम तो अगम्य भूमि का वासी है जहाँ पर निश्चिंत होकर रहता है और प्रेमी साधक तो वैरोचन की तरह हैं जिसके हृदय में पेड़ की डाली के समान विरह खटकता रहता है; यथा–

कुतुबन प्रीतम अगम मुईं तिह वै बसहि निचिंत।
हम बीलोचन डार जिमि, हियें खुरकहि नित।।[30]

'मिरगावती' में वर्णित प्रेमी अपने प्रिय की प्राप्ति के निमित्त जोगी बनकर निकल गया है। उसने अपने केश बिखरा दिए हैं। पाँवों में खड़ाऊ तथा शरीर पर कंथा (गुदड़ी) डाल लिया है। उसने जटाएँ बढ़ा ली हैं चक्र, कंथा, मुद्रा तथा मृगछाला, चक्र और खप्पर ले लिया है। रूद्राक्ष को लेकर शरीर में भस्म रमाली है। रास्ते में शृंगी वाद्य को बजाता हुआ तथा हाथ में किंगरी (सारंगी) व गोरख धंधा ले लिया है। इस योग और युक्ति के प्रियतम के मार्ग में सिद्धि हेतु निकल पड़ा है अब तो मिरगावती ही उसकी युक्ति का आधार(सहारा) बन सकती है।[31] कवि ने प्रियतम को पाने की साधना में सात पड़ावों को पार करने की बात कही है–

सात सरग चढ़ धाँवों जाऊँ।
जहाँ सुनों हों मिरगावती नाऊँ।।[32]

कवि ने मिरगावती के प्रेमी राजकुँवर के प्रेम को साधना के रूप में वर्णित किया है। राजकुँवर कहता है कि मैं देव और मिरगावती के प्रेम के अतिरिक्त किसी का भी स्मरण नहीं करुँगा। अब हृदय में समाधि लगाकर चित्त को मिरगावती में लगाकर मित्र (मिरगावती) के लिए अपने प्राण निछावर करके अपने को पवित्र कर लूँगा। उदाहरणार्थ–

कै सँवरौं मिरगावति नेहाँ।
जिंह दुख लग सहेउं सिर मेहाँ।
जिय महँ सदन समाधि कै, लागेउ अहा जो चित्त।
जो जिउ दीजै मिन्त लगि, सेउ जिउ आह पवित्त।।[33]

कुतुबन ने 'मिरगावती' में वर्णित प्रेम को आध्यात्मिक रूप देने के लिए ही तो कहा है– कुतुबन कँगूरा पेम का, ऊँचा अतिर उतंग। सीस न दीजे पाउतर, कर न पहुँचै खंग। यह साधना का ध्येय पाना बहुत ही कठिन है। इस साधना का तरूवर बहुत बड़ा और इसकी शिखा उच्चतम है जिसके फल आकाश में लगते हैं। इसकी ऊँचाई तक पहुँचने वाला ही इसके फल को प्राप्त कर सकता है–

सिखर ऊँच बड़ तरुवर, औ फर लाग अकास।
करह करील न पहुँचै मनसा, वै फर चाह बेरास।।[34]

प्रतीकात्मकता

कुतुबन ने 'मिरगावती' में प्रेम निरूपण करने के लिए प्रतीकों का भरपूर प्रयोग किया है। सूफी प्रेमाख्यान काव्य की परम्परा के अनुरूप यदि राजकुँवर को जीवात्मा तथा मिरगावती को परमात्मा का रूप माना जाये तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। पूरी कथा में राजकुँवर और मिरगावती के प्रेम में आत्मा और परमात्मा के सम्बन्ध का निर्वाह स्पष्ट रूप से दिखाई देता है।

कवि ने प्रेम निरूपण के प्रतीकों में कमल तथा भँवर के प्रतीक को भी माध्यम बनाया है। जब कवि कहता है कि भँवर ने कमल के परिमल(सुगंध) को ले लिया तो सम्पूर्ण अमृत रूपी महारस का पान कर लिया। या भँवर रात्रि को कमल में बंदी हो गया तो फिर अन्यत्र नहीं भटक सका और प्रेम के रस का पान कर लिया। इस प्रकार कवि ने प्रतीकों के माध्यम से राजकुँवर मिरगावती के प्रेम को निरूपित किया है। कतिपय पंक्तियाँ प्रस्तुत करना समीचीन होगा–

भँवर बास परिमल सब लिया।
और सब अमिय महारस पिया।।
तिस्नाँ काम सान्त मन भई।
दुख बेदन उर कै सब गई।।
कँवल किहाँ भँवर निसि रहा।
जाय न जाइ पेम रस गहा।।[35]

कवि ने रूपमणि और राजकुँवर के प्रेम को चाँद और सूरज के प्रतीकों के माध्यम से भी प्रकट किया है। जैसा कि निम्न उदाहरण से स्पष्ट है–

चाँद अमावस के घर बसा।
सुरज साथ आइ परगसा।।[36]

फारसी प्रभाव

सूफी प्रेमाख्यान काव्य परम्परा के अन्य कवियों के समान कवि कुतुबन के काव्य 'मिरगावती' के प्रेम निरूपण पर फारसी प्रभाव को किंचित रूप में देखा जा सकता है। यद्यपि कुतुबन पर यह प्रभाव जायसी की तुलना में बहुत कम पड़ा है फिर भी कवि इस फारसी

प्रभाव से पूरी तरह मुक्त नहीं है। प्रेम में विरह के कारण विरही नायक अथवा नायिका के रक्त के आँसू गिरने का सीधा सम्बन्ध फारसी की विरह–वर्णन पद्धति से है। इस प्रवृत्ति के कतिपय उदाहरण इस प्रकार है–

रोवइ बहुत सरिल सब लोहू।
जो र देखहि तिह उठै मरोहू।।[37]
हिया न समुझै बाउरेउ, जिंह समुझावउँ चित्त।
देखन चाहों पिय कहँ, लोहू रोवों नित्त।।[38]

निष्कर्ष

इस प्रकार कुतुबन कृत 'मिरगावती' का अध्ययन करने पर इस निष्कर्ष पर पहुंचा गया है कि कुतुबन ने प्रेम की वेदना को शिद्दत से महसूस करते हुए प्रेम की सुंदर किंतु मनोहारी प्रस्तुति दी है। निश्चय ही यह कहा जा सकता है कि कुतुबन प्रेम की पीड़ा के अमर गायक हैं। हिंदी साहित्य के इतिहास में उनका यश अमिट रहेगा।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. *बृहत् हिन्दी शब्द कोश पृ•सं•760*
2. *मिरगावती, क•सं• 17 से 19.1–2 तक*
3. *मिरगावती, क•सं•110*
4. *मिरगावती, क•सं•96/3–5*
5. *मिरगावती, क•सं•233 से 235*
6. *मिरगावती,क•सं•105*
7. *मिरगावती,क•सं•119/3–7*
8. *मिरगावती,क•सं•198/1–7*
9. *मिरगावती,क•सं•199/6–7*
10. *मिरगावती,क•सं•215*
11. *मिरगावती,क•सं•220–4–7*
12. *मिरगावती,क•सं•197/1*
13. *मिरगावती,क•सं•351/6–7*
14. *मिरगावती,क•सं•117*
15. *मिरगावती,क•सं•118*
16. *मिरगावती,क•सं•131/3–4*
17. *मिरगावती,क•सं•178/1*
18. *मिरगावती,क•सं•18*
19. *मिरगावती,क•सं•24/2–3*
20. *मिरगावती,क•सं•111/1–7*
21. *मिरगावती,क•सं•101*
22. *क•सं•236से240तक*
23. *मिरगावती,क•सं•236*
24. *गुप्त डॉ•परमेश्वरी लाल सम्पादितः मिरगावती,क•सं•104*
25. *गुप्त डॉ•परमेश्वरी लाल सम्पादितः मिरगावती,क•सं•106/1*
26. *गुप्त डॉ•परमेश्वरी लाल सम्पादितः मिरगावती,क•सं•107/1*
27. *गुप्त डॉ•परमेश्वरी लाल सम्पादितः मिरगावती,क•सं•115*
28. *मिरगावति, क•सं•115/3*
29. *मिरगावति, क•सं•242*
30. *मिरगावति, क•सं•121/6–7*
31. *मिरगावति, क•सं•109*
32. *मिरगावति, क•सं•105/4*
33. *मिरगावति, क•सं•177/5–7*
34. *मिरगावति, क•सं•221/6–7*
35. *मिरगावति, क•सं•242/1,2.4*
36. *मिरगावति, क•सं•146/1*
37. *मिरगावति, क•सं•32/2*
38. *मिरगावति, क•सं•336/6–7*